आदरणीय महोदय/महोदया,

शोध दिशा त्रैमासिक के (अक्टूबर-दिसंबर 2022) अंक में आपका आलेख प्रकाशि किया जा रहा है। आपके आलेख की पीडीएफ भेज रहे हैं। यदि आलेख में कोई त्रुटि हो तो सुधार कर 3 दिन के भीतर मेरी व्यक्तिगत ईमेल- ashokmanan2002@gmail.com पर भेज दीजिए। निर्धारित अवधि के उपरांत आपके आलेख को सही मानकर प्रकाशित कर दिया जाएगा।

किसी प्रकार की असुविधा के लिए मेरे नंबर 9557746346 पर संपर्क कर सकते हैं।

भवदीय

डॉ॰ अशोक कुमार
उपसंपादक
शोध दिशा (त्रैमासिक)

प्राचीनकाल से मध्यकालीन भारत तक स्त्री दशा : समाज के आईने में

विकास जोशी
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी (उत्तराखंड)
डॉ॰ ललित मोहन पंत
सहायक प्राध्यापक, मनोविज्ञान विभाग
उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी (उत्तराखंड)

प्राचीनकाल से मध्यकालीन भारत तक समाज में परिवर्तन ओर उसके प्रभावों को लेकर महिलाओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। भारतीय समाज के संदर्भ में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों में तो महिला का किरदार हमेशा निर्णायक रहा है। सभी सभ्य समाजों के निर्माण में स्त्रियों की भूमिका को जाना और समझा जा सकता है। स्त्री ही है जिसके साथ परिणय-सूत्र में बँधकर पुरुष परिवार का निर्माण करता है और यही परिवार धीरे-धीरे एक समाज का निर्माण करता है, जिस समाज के दायरे में रहकर मानव अपने समस्त दैनिक कार्यों का निष्पादन करता है और एक सामजिक प्राणी होने का दंभ भरता है वस्तुतः हम देखते हैं कि प्राचीनकाल में महिलाओं को जो स्वतंत्रता और अधिकार प्राप्त थे, उनका मध्यकाल तक आते-आते ह्रास हुआ और इस बदलाव के फलस्वरूप महिलाओं की स्थिति में भी परिवर्तन हुए हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र में इसी परिप्रेक्ष्य में, स्त्री दशा के हर पहलू को जानने और समझने का एक प्रयास है।

प्राचीन भारतीय इतिहास के अध्ययन से हमें ज्ञात होता है कि भारत की प्रथम नागरिक सभ्यता या हड़प्पा सभ्यता का स्वरूप मातृ सत्तात्मक था। अर्थात् सभ्यताओं के प्रारंभ का मूल केंद्र नारी ही थी, वह नारी ही थी जिसने मानव को एक स्थान पर रहकर जीना सिखाकर (कृषि कार्य) यायावार जीवन से उसे मुक्ति दिलवाई। महिलाएँ एक ही समय में विभिन्न प्रकार की भूमिकाओं का निर्वहन करने में सक्षम मानी जाती हैं। वह भूमिका माता, भगिनी, प्रेयसी, पत्नी, दोस्त या फिर वेश्या किसी भी रूप में हो सकती है। मध्यकाल तक आते-आते महिलाओं की स्थिति में नाटकीय परिवर्तन दृष्टिगत होते हैं।

भारत में मध्यकाल की शुरुआत सामान्यतः मोहम्मद बिन कासिम के आगमन के साथ मानी जाती है, जो 8वीं शताब्दी के प्रारंभ में जंबुद्वीप में आया था। मुस्लिम आक्रांताओं के भारत में प्रवेश के साथ ही हम पाते हैं कि महिलाओं की स्थिति में विशेष रूप से वंचित तबकों से संबंधित महिलाओं के संदर्भ में सामजिक रूप से अत्यधिक गिरावट देखने को मिलती है। इसके अलावा भी महिलाओं में पर्दा प्रथा, जौहर प्रथा, बालविवाह, दहेज प्रथा, तलाक जैसी कई कुप्रथाएँ जो प्राचीन समय से चली आ रही थी विद्यमान थी। कुल मिलाकर सभ्यता और संस्कृति के प्रारंभ की यह नारी कालांतर में समय के साथ-साथ हाशिए पर चली गई और उतरोत्तर उसकी प्रतिष्ठा

में कमी आने लगी।

प्राचीन भारत की सामाजिक संरचना में स्त्री-दशा

आर्यों के भारत आगमन का अध्ययन ऋग्वैदिककाल और उत्तर वैदिककाल के अंतर्गत किया जाता है, और हम पाते हैं कि इस काल में आते-आते समाज की मातृ सत्तात्मक व्यवस्था पितृ सत्तात्मक व्यवस्था में परिवर्तित हो गई थी। अब समाज में वीर पुत्रों की कामना के लिए यज्ञ किए जाने लगे, वहीं पुत्री के जन्म को दु:ख का कारण माना जाने लगा। हालाँकि अभी तक के समाज में महिलाओं को उच्च स्थान प्राप्त था और उनकी सामजिक स्थिति सुदृढ़ थी, इस काल में महिलाएँ भी उपनयन संस्कार की अधिकारिणी थीं। जहाँ एक तरफ पुत्री का जन्म दु:ख का कारण था वहीं तत्कालीन समय में महिलाओं को प्राप्त अधिकार आपस में विरोधाभासी प्रतीत होते हैं। क्योंकि इस काल की महिलाएँ शस्त्र-शास्त्र दोनों में निपुण थीं। नारी को जीवन के हर क्षेत्र में चाहे वह शैक्षणिक हो या सामाजिक, आर्थिक हो या राजनीतिक, धार्मिक हो या संपत्ति से जुड़ा कोई अधिकार सभी अधिकार सामान रूप से प्राप्त थे।

हमारा गौरवमयी इतिहास ऐसे कई साक्ष्यों से भरा पड़ा है। वेदों में अनेक स्थलों पर घोषा, सूर्या, अपाला, विश्वंभरा, देवयानी, सावित्री, यमी, श्रद्धा, कामायनी, जैसी विदुषियों का उल्लेख प्राप्त होता है। इस काल में जहाँ एक ओर देवी सरस्वती को वाणी की देवी कहकर संबोधित किया गया है, वहीं अर्धनारीश्वर जैसी संकल्पनाओं पर भी बल दिया गया है; जो कि स्त्री-पुरुष सामनता का परिचायक है। इसी के साथ-साथ प्रकृति को भी सम्मान देते हुए ऋग्वेद में सरस्वती नदी के लिए 'नदीतमा' शब्द प्रयुक्त किया गया है, जिसका शाब्दिक अर्थ है–नदियों में श्रेष्ठ।

इस काल के शुरुआती चरणों में स्त्रियाँ शिक्षण कार्य में ही संलग्न नहीं थीं वरन् वे अपने पतियों के साथ-साथ यज्ञ आयोजन में भी भाग लिया करती थीं। हालाँकि उत्तर वैदिककाल में महिला अधिकारों में कुछ कटौती जरूर आती है, जैसे–स्त्रियों का सभा, समिति में भाग लिया जाना निषिद्ध कर दिया गया। इन सबके बावजूद भी उत्तर वैदिककालीन समाज में स्त्रियों की प्रतिष्ठा बनी रही।

समाज के हर पहलू चाहे वह शासन हो या सेना या फिर राजव्यस्था से संबंधित कोई प्रश्न; हम स्पष्ट रूप से महिलाओं की उपस्थिति के प्रमाण पाते हैं। इस दौरान भी महिला को परिवार में पत्नी होने के नाते वे सभी अधिकार प्राप्त थे जो कि उसके समकक्ष पुरुष को प्राप्त हुआ करते थे। इसीलिए मनु ने भी अपनी रचना 'मनुस्मृति' में कहा है–

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रफला: क्रिया:।

अर्थात् जिस परिवार/समाज/कुल में स्त्री की पूजा होती है, देवताओं का निवास स्थान भी वहीं बन जाता है और जिस घर में स्त्री का तिरस्कार होता है वहाँ सारे कर्म स्वयं निष्फल हो जाते हैं। कहा भी जाता है कि मानव जीवन के सर्वांगीण विकास में नारी की भूमिका अद्‌भुत और अकल्पनीय रही है। नारी ही समाज का वह मूलबिंदु है जहाँ से पूरे समाज का चातुर्दिक विकास संभव है।

स्पष्ट और सही अर्थों में कहा जाए तो वेदों में उल्लेखित चार आश्रमों यथा–ब्रह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम और संन्यास आश्रम में से गृहस्थ आश्रम की सार्थकता का

मूल बिंदु भी नारी ही है। यही कारण है कि प्राचीनकाल में नारी समाज के प्रतिष्ठित पद पर आसीन थी।

धीरे-धीरे समय के साथ साथ महिला अधिकारों में उत्तरोतर गिरावट के लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं, जैसे उत्तर वैदिककाल के अंत में हम जान पाते हैं कि धीरे धीरे वर्णव्यवस्था कर्म आधारित न होकर जन्म/जाति आधारित होने लगी, और इसी कारण समाज में स्थापित नैतिक मूल्यों का भी शनैः शनैः ह्रास होने लगा। सूत्र-काल आते आते नारी के अधिकार पूर्ववत नहीं रह गए। नारी को घर-गृहस्थी तक सीमित कर दिया गया, उस से उपनयन संस्कार का हक तक छीन लिया गया।

अनुलोम विवाह, बहुपत्नीत्व जैसी कुप्रथाएँ समाज के आम प्रचलन में आने लगीं। नारी के गुणों को पति परमेश्वर जैसी अवधारणाओं के बोझ तले दबा दिया गया, जिसके पीछे तर्क गढ़ा गया कि नारी उपभोग की वस्तु है और इसका कार्य अपने पति व परिवार की सेवा के साथ वंश को आगे बढ़ाना है। पति के पत्नी पर मनमाने अधिकारों को हम महाभारत की द्रौपदी और रामायण की सीता माता के संदर्भ में भी समझ सकते हैं।

मध्यकाल आते-आते महिलाओं को मिले समानता और स्वतंत्रता के अधिकारों का भी पूर्णतः हनन हो चुका था, साथ ही महिलाओं से अपेक्षा की जाने लगी थी, कि वे घर की चाहरदीवारी में कैद रहें और अपने पतियों की सेवा कर गृहस्थी पर ध्यान दें। कुल मिलाकर मध्यकाल आते-आते जब पूरा भारतवर्ष संक्रमण की अवस्था से गुजर रहा था, और सभी भारतीय रजवाड़े स्वयं सर्वोच्चता के संघर्षों में उलझे हुए थे, ठीक इसी समय भारत में इस्लाम का आगमन होता है जो अपने साथ लाई गई एक नई संस्कृति तथा नए परिवेश को पूरे भारतवर्ष से परिचित करवाता है।

मध्यकालीन भारत की सामाजिक संरचना एवं नारी की मनो-सामाजिक प्रस्थिति

मध्यकाल में मुसलमानों के आगमन से पूर्ण भारतवर्ष के राजनीतिक माहौल में कुछ नए परिवर्तन भी आए। मध्ययुगीन अनिश्चित राजनीतिक परिस्थितियों का प्रभाव यहाँ के सामजिक, आर्थिक ढाँचे पर भी स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। कुल मिलाकर प्राचीनकाल से अब तक पूरे जंबुदीप में स्त्रियों की स्थिति बदलती रही। ऐसे माहौल में स्त्रियों के अधिकारों का और अधिक संकुचन दृष्टिगत होता है।

मध्यकाल में प्रवेश करने तक महिलाओं की स्थिति दयनीय हो चली थी और न ही सुल्तानों ने और न ही मुगल बादशाहों ने महिलाओं की स्थिति पर विशेष ध्यान दिया और इन समस्त स्थितियों का प्रभाव महिला के हर पहलू चाहे वह शिक्षा हो स्वास्थ्य हो या फिर कोई अन्य पहलू सब पर पड़ा।

इतिहास के संदर्भ में निष्पक्ष होकर यदि नारी के बारे में यह कहा जाए कि नारी ही किसी समाज की आध्यात्मिकता और उन्नति का प्रतीक होती है; तो इसमें कोई अतिशयोक्ति न होगी। अलबत्ता भारत में तुर्क शासन स्थापित होने के साथ ही जीवन और समाज से जुड़ी सभी प्रणालियों में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आना स्वाभाविक था। यदि स्त्री-दशा के परिप्रेक्ष्य में हम देखें तो इस काल में नारी की दशा और दिशा में स्पष्टतः पतन के लक्षण दृष्टिगत होते हैं।

मध्यकाल के दौरान स्त्री में पाए जानेवाले वे सभी दिव्य गुण यथा–त्याग, विनम्रता, परोपकार, ममता, दया, स्नेह, कोमलता इत्यादि वे सभी तत्त्व जिनसे नारी की पहचान थी उसकी

अस्मिता थी; अब वे उसके अवगुण बनने लगे। नारी, जिसे इतिहास में कभी साम्राज्ञी जैसे अलंकरणों से सुशोभित किया जाता है अब आश्रिता बनने को मजबूर हो गई। वही नारी जो वैदिकयुगीन सभ्यता का मान थी अब उसे श्रुति पाठ करने तक के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया।

नारी के प्रति सहृदयता का वह भाव व कल्पना, समय के साथ धूल-धूसरित होती चली गई। स्त्रियों के संदर्भ में अब तक समय पूर्णत: बदल सा गया, मानो नारी शक्ति के मानसिक, वैचारिक तथा आत्मिक विकास पर कई ताले जड़ दिए गए हों। 'स्त्री शूद्रो नाधीताम्' जैसे वाक्य रचकर उसे शूद्र की कोटि में रख दिया गया। सोलह संस्कारों में से अब नारी मुख्यत: केवल एक संस्कार की अधिकारिणी रह गई और वह था–विवाह संस्कार। विवाह में भी तत्कालीन समाज में हिंदू और मुसलमान धर्म में काफी विभिन्नताएँ देखने को मिलती हैं।

सनातनकाल से चले आ रहे आदर्शों की इमारत तब और अधिक ढह गई जब भक्तिकालीन संत गोस्वामी तुलसीदास जी ने अपनी रचना रामचरितमानस में यह लिख दिया–'ढोल, गँवार, शूद्र, पशु, नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी।' इसके अलावा एक और दृष्टांत जो कि बौद्ध धर्म से जुड़ा है वह इस प्रकार है–हम सभी इस बात से परिचित हैं कि जब गौतम बुद्ध ने जब अपने प्रिय शिष्य के अनुरोध करने पर भिक्षुक संघ में महिलाओं को प्रवेश की अनुमति दी थी तब उन्होंने अपने शिष्य को स्वयं कहा था कि वत्स यह धर्म यह चेतना जो हजारों काल तक चलती अब स्त्री के प्रवेश पा जाने के कारण कुछ 500 वर्षों तक ही अस्तित्व में रह पाएगी।

इसी क्रम में आगे जब विक्रमशिला विश्वविद्यालय स्थापित हुआ तो उस समय में एक बार एक भिक्षुक के पास मदिरा की बोतल पकड़ी गई, अधिक जाँच करने पर यह ज्ञात हुआ कि उस भिक्षुक को यह बोतल किसी भिक्षुणी द्वारा दी गई है। यह सारी घटनाएँ/रचनाएँ तत्कालीन समाज में नारियों की स्थिति को समझने-समझाने के लिए स्वयं में पर्याप्त मालूम पड़ती हैं।

मध्यकाल आते-आते अब कन्या के जन्म को अशुभ मानते हुए इसे दंपति के पूर्व जीवन के बुरे कर्मों से जोड़ा जाने लगा था और वहीं वह स्त्री जो बार-बार कन्या को जन्म दे उसे घृणित निगाहों से देखा जाने लगा। हालाँकि पुत्ररत्न प्रदान करने वाली स्त्रियों को कुछ सम्मान का भाव दिया जाता था। यहीं से समाज में एक नई कुप्रथा का प्रचलन हुआ जिसे 'कन्या शिशु हत्या' या फिर वर्तमान परिप्रेक्ष्य में 'भ्रूण हत्या' के रूप में समझा जा सकता है और इस कुप्रथा की पैठ समाज में इतनी गंभीर जड़ें जमाए हुए है कि आज के आधुनिक भारत में भी इस प्रकार की घटनाएँ देखने को मिलती हैं। (विशेषकर हरियाणा और दमन-दिऊ के संदर्भ में जिनका लिंगानुपात क्रमश: 879 और 618 है।)

यदि मध्यकालीन समाज की व्यस्था में विवाह की बात की जाए तो यहाँ हिंदू समाज और मुस्लिम समाज के रीति-रिवाजों, नियमों आदि में कहीं एकरूपता तो कहीं असमानता दिखलाई पड़ती है। हिंदू समाज के पावों में जहाँ जाति प्रथा की बेड़ियों के साथ-साथ सती प्रथा और जौहर प्रथा जैसी कुरीतियाँ प्रचलित थी, वहीं मुस्लिम समाज में पर्दा प्रथा और बहुविवाह जैसी प्रथाएँ प्रचालन में थीं। इसके अलावा समाज में दास प्रथा, बाल विवाह जैसी परंपराओं का प्रचलन दोनों समाज में एक साथ देखा जा सकता है; जिससे समाज में विधवा महिलाओं की संख्या तेजी से बढ़ने लगी, और घोर विडंबना तो यह थी कि विधवा विवाह पर प्रतिबंध लगा दिया गया था। (बाद में आगे चलकर 19वीं शताब्दी के उतरार्द्ध में राजा राममोहन राय और ईश्वरचंद्र विद्यासागर के प्रयासों

से क्रमशः सतीप्रथा पर प्रतिबंध और विधवा विवाह की अनुमति प्राप्त हो सकी।)

इस दौरान कुलीन वर्ग की महिलाओं का दायरा घरेलू कार्यों तक सीमित कर दिया गया था। धर्म रक्षा और समाज की सुरक्षा के नाम पर ऐसे कई नियम अस्तित्व में आ चुके थे जिन्होंने महिलाओं के जीवन को पशुवत बनाकर स्त्रियों के सर्वांगीण विकास को ही बाधित कर दिया था। हालाँकि कृषि कार्यों और मजदूरी में सलंग्न स्त्रियाँ इसका अपवाद थीं। वे घरेलू कार्यों, बच्चों के लालन-पालन के अतिरिक्त अपने पति के साथ कृषि कार्यों व अन्य सभी कार्यों में भी अपनी सहभागिता प्रदान करती थीं।

आर्थिक दृष्टिकोण से यदि देखा जाए तो तत्कालीन समाज में हिंदू महिलाओं की अपेक्षा मुस्लिम महिलाओं की स्थिति थोड़ा अधिक सुदृढ़ थी। जैसे मुस्लिम महिलाएँ अपने पिता की संपत्ति में बराबर की हकदार थीं और उनका यह अधिकार विवाहोपरांत भी बना रहता था; जबकि हिंदू महिलाएँ इस अधिकार से वंचित थीं। मुस्लिम धर्म में 'मेहर' व्यवस्था विद्यमान थी अर्थात् अपनी बेगम की आर्थिक स्थिति को सुरक्षित रखने के लिए सौहर को यह धन देना ही पड़ता था।

यदि भविष्य में पुरुष द्वारा दूसरा निकाह कर भी लिया जाता था तो भी वह इस धन को वापस लेने का अधिकारी नहीं था। इसके विपरीत हिंदू महिलाओं को ऐसा कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं था।

हालाँकि जब हम मध्यकाल में स्त्री की स्थिति पर विचार विमर्श कर रहे हैं तो यह आवश्यक हो जाता है कि हम तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था में भी महिलाओं के योगदान को रेखांकित करें। कुछ चुनिंदा महिलाओं को छोड़ दिया जाए तो मध्यकाल में महिलाओं का यह अधिकार भी मन को तसल्ली देने हेतु ही पर्याप्त है। इस अधिकार को पाने वाली सभी महिलाएँ किसी-न-किसी राजघराने से संबंधित हैं, शायद ही इस श्रेणी में हम किसी सामान्य महिला या मध्यम वर्ग की महिला का उदाहरण पा सकें। इस दौर की कुछ प्रमुख महिलाओं में शामिल हैं– इल्तुतमिश की पत्नी शाहतुर्कान, रजिया बेगम, दुर्गाबाई, अहल्याबाई, जीजाबाई, गुलबदन बेगम, नूरजहाँ, जहाँआरा, रोशनआरा इत्यादि। मध्यकाल से इन सभी महिलाओं के उदाहरण होने के बावजूद भी यह कहना मुश्किल है कि तत्कालीन समाज में महिलाओं की स्थिति संतोषजनक थी। इन सभी महिलाओं में जो बात सामान है वह है इन सभी की शासन के प्रति रुचि। इन सभी महिलाओं ने राजनीति के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा के दम पर अपना लोहा मनवाया है। इसमें पहला उदाहरण शाहतुर्कान का है जिसने अपने सौहर की मृत्यु के पश्चात पाया कि उसका पुत्र भोग-विलास में रत रहता है और उसकी शासन के प्रति कोई रुचि नहीं है, तब उसने शासन की बागडोर सँभाली और स्वयं राजकीय आज्ञाओं को देना आरंभ किया।

दूसरा उदाहरण रजिया सुल्तान का है, जिसे पूरे मुस्लिम काल/मध्यकाल की एकमात्र मुस्लिम शासिका होने का श्रेय प्राप्त है। इतिहास में ऐसा पहली बार हुआ था कि दिल्ली की जनता ने स्वयं इसे चुनकर राजगद्दी पर बैठाया था। इल्तुतमिश की यह योग्य पुत्री चालाक, निडर, शूरवीर और न्यायप्रिय शासिका के रूप में सामने आई।

अद्भुत गुणों से भरपूर इस महान शासिका में योग्य शासक के सभी गुण विद्यमान थे। यह इस्लाम की पहली महिला थी जिसने स्त्रियोचित गुणों का त्याग कर राजदरबार में पुरुषों की भाँति आकर इस्लामिक कानूनों/परंपराओं का उल्लंघन करने का साहस किया था। हालाँकि रूढ़िवादी पितृसत्तात्मक समाज इसके व्यवहार को पचा नहीं पाया और कुछ समय बाद ही कैथल के जंगल

में इसकी हत्या करवा दी गई।

रानी दुर्गावती की कहानी भी कुछ इस प्रकार ही है, अकबर के सेनापति आसफ खान से युद्ध में हारकर खेत रहने से पूर्व गोंडवाना की इस अमर रानी ने लगभग 15 वर्षों तक गोंडवाना राज्य पर सफलतापूर्वक राजकाज का कार्यान्वयन किया था। जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ ने तो एक प्रकार से मुगल शासक के पीछे से अपनी 'किचन केबिनेट/जूंटा गुट' का ही निर्माण कर डाला था। इसी नूरजहाँ की माँ ने गुलाब से इत्र निकालने की खोज भी की थी। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मध्यकालीन समाज में पुरुषों की संकीर्ण और रूढ़िवादी सोच हावी होने के बावजूद भी कुछ गिनी-चुनी महिलाओं ने अपनी प्रतिभा के दम पर राजनीतिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अब आखिर में हम मध्यकालीन महिलाओं की शिक्षा पर विचार-विमर्श करते हैं। जहाँ तक बात स्त्री शिक्षा की है तो यह भारत की अति प्राचीन परंपरा का अंग रही है। हालाँकि वैदिककाल में स्त्री शिक्षा के सर्वोच्च स्थिति में होने के बावजूद भी इसमें निरंतर गिरावट के तत्त्व प्रबल होते चले गए, और मध्यकाल आते-आते स्त्री शिक्षा की दशा और दिशा निरीह अवस्था में पहुँच गई। समाज में स्त्रियों के प्रति प्रचलित विभिन्न कुप्रथाओं ने स्त्री शिक्षा को बाधित करने का कार्य बखूबी किया और वहीं बाल विवाह और पर्दा प्रथा जैसी कुप्रथा तो स्त्री शिक्षा को नेस्तानबूद करने की दिशा में कब्र की आखरी कील साबित हुई है। हालाँकि मध्यकाल में प्राइमरी स्तर तक के ऐसे स्कूलों का उल्लेख अवश्य मिलता है जहाँ लड़के और लड़कियाँ साथ अध्ययन करते थे। हालाँकि इनकी संख्या भी सीमित थी। कुलीन वर्ग के लोग अपने घर पर ही शिक्षक रखकर अपनी कन्याओं को ज्ञानोपार्जन अवश्य कराते थे परंतु इनकी संख्या भी सीमित थी और अकसर ऐसे शिक्षक के रूप में किसी वृद्ध विधवा महिला को नियुक्त किया जाता था। मध्यकाल में हिंदू तथा मुस्लिम दोनों धर्मों में शिक्षित महिलाओं की जानकारी मिलती है परंतु यह स्त्री शिक्षा कुछ गिने-चुने मुट्ठीभर सक्षम लोगों को ही प्राप्त थी। सामान्य और निम्नवर्ग की महिलाएँ सामन्यत: अशिक्षित ही थी।

मध्यकालीन समाज में साक्षर हिंदू महिलाओं में शामिल कुछ महिलाओं के नाम इस प्रकार हैं–लीलावती, सूर्यमती, देवलरानी, रूपमती, लखिमा देवी, चंद्रकला देवी, मीराबाई इत्यादि। मध्यकालीन भक्तकवियों में मीराबाई ही हैं जिनकी काव्य-रचना में नारी अस्मिता की खनक है। अपनी रचनाओं में जहाँ वे एक तरफ स्त्री की परतंत्रता और यातनाओं को अभिव्यक्त करती हैं वहीं दूसरी तरफ वे रूढ़िवादी बंधनों और उससे स्वतंत्र होने के लिए संघर्ष की वकालत करती हैं। अंतर्द्वंद्व, चेतना, अन्याय के विरुद्ध आवाज, रूढ़िवादिता का विरोध, क्रांति आदि सभी स्वर उनकी लिखित रचनाओं में साकार होते दिखाई पड़ते हैं।

वहीं यदि हम मुस्लिम साक्षर स्त्रियों पर नजर डालें तो वे सभी भी राज परिवारों से ही संबंधित हैं। उदाहरण के तौर पर रजिया बेगम, गुलबदन बेगम, फिरोजा, खुदाबंद, जहाँआरा, जेबुन्निस्सा इत्यादि। गुलबदन बेगम बाबर की बेटी और हुमायूँ की बहन थी। इन्हें अपने भाई हुमायूँ की जीवन गाथा 'हुमायूँनामा' लिखने का श्रेय प्राप्त है। अलाउदीन की पुत्री फिरोजा ने ज्योतिष विद्या में निपुणता अर्जित की हुई थी। वहीं गयासुदीन की पुत्री खुदावंद भी पूर्णत: शिक्षित थी। मुगल राजकुमारियाँ जहांआरा और जेबुन्निस्सा कुशल कवयित्रियों में शुमार थीं।

इस प्रकार हम जान पाते हैं कि हिंदू और मुस्लिम दोनों ही संप्रदायों में तथाकथित उच्च कुल की महिला ही शिक्षित थी। निम्नकुल और ग्रामीण परिवेश की महिलाएँ अनपढ़ और पिछड़ी हुई ही थीं और इस स्त्री शिक्षा में ह्रास का सबसे बड़ा कारण शासक वर्ग की अनदेखी और जागरूकता

में कमी को माना जा सकता है। शासकों की अनदेखी, रूढ़िवादी तत्त्वों और संकीर्ण सोच, पुरुषों के वर्चस्व वाले समाज ने मध्यकालीन स्त्री को सिर्फ भोग-विलास का पर्याय बनाकर रख दिया था। इस काल में नारी के ऊपर इतने बंधनों का बोझ लाद दिया गया था कि मानो उसका स्वयं का कोई अस्तित्व ही न हो; उसे केवल पुरुषों की छाया मात्र बना दिया गया था। मध्यकालीन समाज ने स्त्री का पूर्णत: शोषण कर उसे बाजार में पड़े उस बेजान खिलौने-सा बना दिया था जिसमें आवाज तो थी, पर उसका नियंत्रण किसी और के हाथ में था।

संदर्भ

1. चंद्रमोहन अग्रवाल, भारतीय नारी : विविध आयाम, पृ॰ 35, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा
2. बृहदारण्यक, उपनिषद, 1/4/17
3. प्रेमनारायण अग्रवाल, संपादन-जगदीश्वर चतुर्वेदी, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिपो, नई दिल्ली, पृ॰ 23-24
4. स्त्री: भारतीय एवं पाश्चात्य अवधारण, डॉ॰ मधु देवी, अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका, शोध, समीक्षा और मूल्यांकन, पृ॰ 74
5. गजानन शर्मा, प्राचीन साहित्य में नारी, रचना प्रकाशन, 45-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद, पृ॰ 21
6. सूरसागर, पहला खंड, संपादक-नंददुलारे बाजपेयी, पृ॰ 255 से 594 तक के विविध प्रसंग
7. अयोध्याकांड, दोहा, 56, चौ॰ 1
8. गजानन शर्मा, प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ॰ 42-43
9. वही, पृ॰ 42-43
10. मिनहाज-उस-सिराज, तबाकते-नासिरी, अँग्रेजी अनु रेवर्टी, दिल्ली 1962, पृ॰ 179
11. सौरभ पांडेय, (2019) 'ढोल, गंवार, शूद्र, पशु और नारी दंड के अधिकारी, जानें इस चौपाई का सही मतलब' https://newschecker-in/hi/common-myth-hi/dhol-ganwar-shudra-pashu-naari
12. रामचरितमानस, तुलसीदास
13. आशा कौशिक, नारी सशक्तिकरण : प्रतिशत विमर्श एवं यथार्थ, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृ॰ 200
14. योगेंद्र जोशी, 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता:' इत्यादि-मनुस्मृति के वचन (2009/09/11)
15. https://lucknowfirst-com/hindi/what-is-written-manusmriti-about-shudra/

Dr. Lalit Mohan Pant
HN 131 Naruttam Ganga Vihar Phase 3
Harinagar Kusumkhera
Haldwani, Nainital 263139
Mob. 8439139092
lmpant33@gmail.com